© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

गाँधी जी का सत्य और अहिंसा

डॉ. संजय कुमार सुमन
सलेमपुर,
जहानाबाद, बिहार, भारत।

सत्य और अहिंसा में घनिष्ठ संबंध है। अहिंसा का मार्ग ही सत्य का मार्ग है। मनुष्य का प्रत्येक कार्यकलाप सत्य की प्रप्ति है। इसलिए गांधी जी ने कहा है ''सत्य की खोज अहिंसा के बिना नहीं हो सकती है। अहिंसा और सत्य में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों में ऐसा सम्बन्ध है कि एक दूसरे से दोनों को अलग नहीं किया जा सकता है। जिस तरह एक सिक्के के दो पहलू होते हैं, उसी तरह सत्य और अहिंसा भी एक वस्तु के दो पक्ष हैं। अहिंसा से ही सत्य की प्राप्ति सम्भव हो सकती है।[1]''

सत्य यदि सबसे बड़ी विधि है तो अहिंसा सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। त्याग, अहिंसा, किसी चीज पर से आधिपत्य छोड़ना, संन्यास ग्रहण करना आदि सत्य की उपलब्धि के साधन है। सत्य साधन एवं सार्वभौम है। यह सभी स्थानों, सभी देशों, सभी चीजों और सभी मनुष्यों के लिए है। सत्य काल एवं देश की दूरी से परे है। काल की भिन्नता एवं देशों की पृथक्ता, इसे सीमित नहीं कर सकती, क्योंकि सत्य की सीमा निश्चित नहीं है। सत्य के बिना अहिंसा की कल्पना नहीं हो सकती।

अतः यह स्पष्ट है कि सत्य और अहिंसा में कोई अन्तर नहीं है। सत्य लक्ष्य है, तो अहिंसा साधन है। दानों में अन्योन्याश्रय संबंध है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने कहा है ''प्रेम और सत्य में निकट संबंध है और जब कोई सत्य की ईश्वर के रूप में खोज करता है तो उसे प्रेम और अहिंसा के पथ का अनुसरण करना पड़ेगा। मेरा विश्वास है कि साधन और लक्ष्य एक दूसरे से परे नहीं है। दोनों एक दूसरे में परिवर्तन योग्य है। मुझे यह कहने में हिचकिचाहट नहीं होगा कि ईश्वर प्रेम में सता है।[2]''

गाँधीजी ने अहिंसा का प्रयोग विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया है। उनका विश्वास था कि अच्छे उदेश्यों के लिए सदमार्ग की आवश्यकता है। बुरे मार्ग, बुरे लक्ष्य की ओर ही ले जायेंगे। इसलिए गाँधीजी ने नैतिक तथा आध्यात्मिक आदर्शोकी प्राप्ति के लिए अहिंसा जैस आदर्श मार्ग का अनुसरण किया। अच्छे आदर्शों की प्राप्ति के लिए बुरे मार्गों का अनुसरण से उन आदर्शों की प्राप्ति नहीं होगी, प्रयोगकर्त्ता बुरी वस्तु ही प्राप्त करेगा। जो उसका लक्ष्य नहीं है। साधन की तुलना बीज से और लक्ष्य की तुलना वृक्ष से की जा सकती है। यदि अहिंसा बीज है तो सत्य वृक्ष है। अतः जो सम्बन्ध वृक्ष और बीज में है वही संबंध लक्ष्य और साधन में, सत्य और अहिंसा में है। गाँधीजी के विचार से हम पहले उदेश्य को साफ–साफ समझ लें और उसकी प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्प कर लें फिर लक्ष्य को हम अपने मस्तिष्क में कभी भी नहीं दोहरावें, तदुपरान्त हम साधनों को महत्त्व दें। साधनों को ही अपने मस्तिष्क में रखें। मैंने अपने को विशेष रूप से साधनों से ही संबंधित रखा और उनके प्रयोग पर ध्यान रखा है। मैं जानता हूँ कि यदि उन पर ख्याल रखें तो उदेश्य की प्राप्ति अवश्य होगी। मैं अनुभव करता हूँ कि उदेश्य की प्राप्ति उसी अनुपात में होगी जिस अनुपात में हम साधनों की शुद्धता पर ध्यान देगे।[3]

गाँधीजी सभी चीजों में अहिंसा मार्ग का अनुसरण करते थे। किसी अच्छी चीज की उपलब्धि के लिए अहिंसा आवश्यक है। कोई भी मनुष्य किसी चीज की खोज में हो, चाहे वह सांसारिक वस्तु हो या आध्यात्मिक तो यह आवश्यक है कि वह अहिंसा के पथ पर अग्रसर हो। लक्ष्य साधन का फल है। यह कठिन परिश्रम का फल है। बुरे साधनों से बुरे फल प्राप्त होते हैं और अच्छे साधनों से अच्छे फल। इस संदर्भ में गाँधीजी ने कहा है ''कुछ लोग कहते हैं कि साधन सिर्फ साधन ही है, मैं कहूँगा कि साधन ही सब कुछ है। जैसा साधन होगा उसी तरह का फल मिलेगा। साधन और लक्ष्य में कोई विभाजक रेखा नहीं है। दोनों में कोई अंतर नहीं है। लक्ष्य की प्राप्ति उसी अनुपात में होती है जिस अनुपात में साधन का प्रयोग करते हैं। इस बात को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता है।''

सत्य और अहिंसा केवल संन्यासियों के धर्म नहीं। जीवन के प्रत्येक व्यवहार में सत्य और अहिंसा के सिद्धान्त लागू हो सकते हैं। सत्य और अहिंसा में असीम शक्ति निहित है। इससे मनुष्य का मनोबल बढ़ता है। गाँधीजी के मतानुसार ''सत्य और अहिंसा जड़ बुद्धिवालों के लिए नहीं है। सत्य शोध से या उसके अनुसरण के फलस्वरूप शरीर, बुद्धि और आत्मा का पुनर्सकरण होना ही चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो यह सत्य और अहिंसा मिथ्या या हम मिथ्या है। चूँकि सत्य अहिंसा का मिथ्या होना असंभव है इसलिए हम ही मिथ्या हैं। सम्पूर्ण रचनात्मक कार्यक्रम सत्य और अहिंसा के शोध के निमित्त है। धारा सभाओं में जाने का यदि हमारे लिए कोई दिलचस्पी हो सकती है तो वह केवल इसलिए हो सकती है कि किसी अन्य कारण से नहीं। सत्य और अहिंसा साधन भी है और साध्य भी, और यदि श्रेष्ठ और सत्यपरायण व्यक्ति धारा सभाओं में भेजे जाएँ तो वह सत्य और अहिंसा के ठोस साधन बन सकते हैं। यदि ऐसा नहीं हो सकता अपराध हमारा है।[5]''

आत्मशुद्धि के लिए अहिंसा धर्म का पालन आवश्यक है। जब तक आत्मशुद्धि नहीं होगी तब तक परमात्मा दर्शन नहीं होगा। परमात्मा तो सत्य स्वरूप है। मनुष्य राग, द्वेष और ईर्ष्या से युक्त है। जब वह राग, द्वेष और ईर्ष्या से मुक्त हो जाता है तब वह मन, वचन और काया से निर्विकार हो जाता है। गाँधीजी अहिंसा का प्रयोग हर क्षेत्र में करते थे। वे कदम कदम पर अहिंसा धर्म का पालन करते थे। जिस किसी क्षेत्र में उन्हें सफलता दिखाई पड़ती थी, उसके लिए वह अपनी कमजोरियों को स्वीकार करते थे। इसलिए तो गाँधीजी ने कहा है ''मैं अपने लिए पूर्णता का दावा नहीं करता मगर यह जरूर कहता हूँ कि मैं सत्य का एक अनन्य सहायक हूँ सत्य जो ईश्वर का ही दूसरा नाम है। उसी खोज के क्रम में मैंने अहिंसा को पाया। इसका प्रचार मेरे जीवन का ध्येय है। मैं अपने इस ध्येय को कार्यरूप देने के लिए ही जीना चाहता हूँ।[6]''

महात्मा गाँधी का विश्वास है कि अहिंसा और सत्य एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरा अधूरा है। अहिंसा के लिए सत्य अनिवार्य, सत्य के लिए अहिंसा आवश्यक है। अहिंसा का सम्पूर्ण फल सत्य में बीज रूप में निहित है। गाँधीजी का कहना था कि ''सत्य विधेयात्मक और अहिंसा निषेधात्मक है। सत्य वस्तु का साक्षी है तो अहिंसा वस्तु होने पर भी उसका निर्णय करती है। सत्य है, असत्य नहीं है। फिर भी अहिंसा ही होनी चाहिये यह परम धर्म है। सत्य स्वयं सिद्ध है। अहिंसा उसका संपूर्णकाल फल है। वह सत्य में छुपी हुई है, वह सत्य की तरह व्यक्त नहीं इसलिए उसके मान्यता दिए बिना मनुष्य भले ही शास्त्र की शोध करे, उसका सत्य उसे अहिंसा ही सिखाएगा।[7]''

सत्य का शोध्रक हिंसक हो ही नहीं सकता। सत्य के शोधक में थोड़ी सी भी हिंसा हो तो वह सत्य को नहीं पा सकता। चूँकि दोनों में इस तरह का संबंध है कि हिंसा भावनावाला व्यक्ति सत्य पर विजय किसी तरह प्राप्त नहीं

कर सकता। गाँधीजी कहते हैं, सत्य–अहिंसा और असत्य तथा हिंसा के मध्य कोई बीच का मार्ग नहीं है। थोड़े से व्यक्तियों का सत्य भी शाश्वत रह जाएगा, परंतु करोड़ों व्यक्तियों का असत्य तूफान में पड़े तिनके की तरह नष्ट हो जाएगा।[8]

''सत्यमेव जयते'' की तरह गाँधीजी भी इस सिद्धान्त पर विश्वास करते थे। गाँधीजी सत्य और अहिंसा की वेदी पर देश और धर्म को न्योछावर करने के लिए भी प्रस्तुत करते थे। गाँधीजी सत्य और अहिंसा के सिवा किसी और वस्तु के अस्तित्व तक को स्वीकर नहीं करते उनका कहना है ''मैं हिंसा और असत्य को अपने जीवन में नहीं आने दूँगा। मानव जीवन का नियम सत्य और अहिंसा है। असत्य और हिंसा मानव जीवन को कष्ट देने वाला है। असत्य का आवलम्बन कर कोई भी व्यक्ति प्रगति नहीं कर सकता। असत्य एक दुर्बल नींव है जिस पर उठाया गया ईट, उदेद्श्य का महल भरभराकर गिर जाता है। जिस प्रकार कच्ची ईटों से निर्मित भवन वर्षा की बौछारों मं टिक नहीं पाता किन्तु पक्की ईटों वाला घर वर्षा तूफान को झेलने में भी समर्थ हो जाता है। उसी प्रकार जीवन के क्षेत्र में असत्य और हिंसा के मार्ग पर चलने वालों में नैतिक मनोवल नहीं होता है।[9]''

गाँधीजी का सारा जीवन सत्य की उपासना में व्यतीत हुआ। परन्तु सत्य रूपी पौधे को सींचने की आवश्यकता होती है। जिस प्रकार वृक्ष के विकास के लिए उसे सींचना अनिवार्य है। उसे प्रकार सत्य को पाने के लिए अहिंसा को सींचना पड़ेगा। क्योंकि जब तब अहिंसा का पालन नहीं होगा तब तक सत्य की प्राप्ति नहीं होगी। गाँधीजी के संपूर्ण जीवन और क्रिया में सत्यसेवन का लक्षण था। अपने लक्ष्य के पूर्ति हेतु उन्होंने सारी जिन्दगी इसी में व्यतीत करने का प्रयास किया। इसीलिए तो उन्होंने कहा है ''मेरी तमाम प्रवृत्तियों का मूल्य एक ही दिखाई देगा। जीवन के हर क्षेत्र में चाहे वह लघु हो या महत्तम। सत्य और अहिंसा की उपासना करना ही मेरा ध्येय है।[10]''

गाँधी जी ने कहा है, ''हमारे उदेश्यों एवं प्रतिज्ञाओं का आधार सत्य और सत्य का पौधा तब तक नहीं फले फूलेगा जब तक तुम उसे अहिंसा के जल से नहीं सीचोगे।[11]'' अहिंसा के नाम पर हिंसा होती है, धर्म के नाम पर अधर्म होता है लेकिन सत्य और अहिंसा की परीक्षा भी तो उन्हीं के बीच हो सकती है।[12]

अहिंसा और हिंसा के प्रशिक्षण में काफी अंतर है। अहिंसा का प्रशिक्षण यह बतलाता है कि मनुष्य किस तरह से धार्मिक और नैतिक प्रशिक्षण लेकर वह अपने को सत्यता का न्यौछावर कर सके। हिंसा यह सिखलाती है कि मनुष्य किस तरह अपने भौतिक चीजों एवं पाशविक वृत्तियों की पूर्ति कर सके। गाँधीजी का कथन है ''इस प्रकार हम देखते हैं कि अहिंसा की शिक्षा हिंसा की शिक्षा से सर्वथा विपरीत है। बाह्य चीज की रक्षा के लिए हिंसा की आवश्यकता होती है। आत्मा की रक्षा के लिए अहिंसा जरूरी है।[13]''

सन्दर्भ सूची –

1. महात्मा गाँधी, यरवदा मंदिर से दिल्ली, नवजीवन प्रेस, अहदाबाद, द्वितीय संस्मरण, 1936
2. यंग इंडिया, 31 दिसम्बर 1931 पृ0 427
3. अमृत बाजार पत्रिका, 17 अगस्त, 1933
4. यंग इंडिया, 17 जुलाई, 1924 पृ0 1236
5. हरिजन सेवक (साप्ताहिक) 8 मई, 1937 (संपादक वियोगी हरि, दिल्ली, 1933–40)

6. महात्मा गाँधी का संदेश, संकलन और संपादक, यू0 एस0 मोहन राव, पृ0 23 प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अक्टूबर, 1969
7. हिन्दी नवजीवन 14 अक्टूबर, 1925
8. यंग इंडिया, 20 मई, 1926
9. हिन्दी नवजीवन अगस्त, 1929
10. महादेव भाई, डायरी भाग–2, 21 नवम्बर, 1932, पृ0 217
11. हरिजन सेवक, 29 फरवरी, 1936
12. बापू के पत्रः सरदार बल्लभ भाई के नाम 24 दिसम्बर, 1946
13. हरिजन, 1 सितम्बर 1940, पृ0 266